SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

बच्चों के व्यक्तित्व विकास में अध्यात्म की भुमिका

ज्योति कुमारी, (Ph.D.), शिक्षिका (गृह विज्ञान),
सारण एकेडमी प्लस टू विद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
ज्योति कुमारी, (Ph.D.), शिक्षिका (गृह विज्ञान),
सारण एकेडमी प्लस टू विद्यालय,
छपरा, बिहार, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 04/11/2020
Revised on : -----
Accepted on : 11/11/2020
Plagiarism : 01% on 05/11/2020

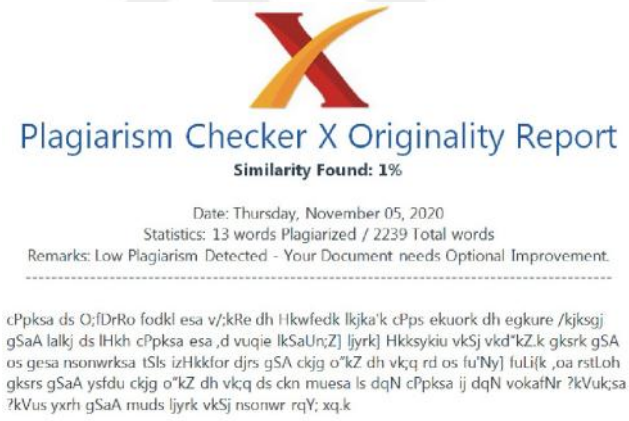

शोध सार

बच्चे मानवता की महानतम धरोहर हैं। संसार के सभी बच्चों में एक अनुपम सौन्दर्य, सरलता, भोलापन और आकर्षण होता है। वे हमें देवदूतों जैसे प्रभावित करते है। बारह वर्ष की आयु तक वे निश्छल, निस्पक्ष एवं तेजस्वी होते हैं। लेकिन बारह वर्ष की आयु के बाद उनमें से कुछ बच्चों पर कुछ अवांछित घटनायें घटने लगती हैं। उनके सरलता और देवदूत तुल्य गुण विदा हो जाते हैं, और हमारे आधुनिक समाज की शक्तियों द्वारा वे मनोवैज्ञानिक रूप से विकृत होने लगते है। हम देखते है कि उनमें से कुछ इतने विकृत हो जाते हैं कि वे बाल अपराधी बन जाते हैं या मादक द्रव्यों के सेवन के आदि हो जाते हैं, और उनका समस्त सौन्दर्य कुरूपता में परिणत होने लगता है। यह समस्या अत्यंत गंभीर बन गई है, क्योंकि ऐसे बच्चों की संख्या स्थिर या घटती हुई नहीं है, अपितु वास्तव में प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। यही वह अत्यधिक गंभीर समस्या है, जिससे विश्व के सभी समाज जुझ रहे हैं। हम आधुनिक समाज में एक अभाव का अनुभव करते है और वह है अध्यात्म के प्रभाव का अभाव। अध्यात्म के प्रति लोगों की रूचि में कमी आयी है जो कि पूर्व की सभी सभ्यताओं में 'शक्ति' का महान स्त्रोत रहा करता था। यदि हम अध्यात्म को वैज्ञानिक रूप से लें तो यह प्रत्येक मानव को एक गहन संदेश प्रदान करता है।

मुख्य शब्द

शिक्षा, व्यक्तित्व विकास, अध्यात्म, जैविक क्रम–विकास, वेदान्त।

''प्रत्येक आत्मा अव्यक्त ब्रह्म है। बाह्य एवं आन्तरिक प्रकृति को वशीभूत करके आत्मा के इस ब्रह्मभाव को व्यक्त करना ही जीवन का चरम लक्ष्य है। कर्म, उपासना, मनः संयम अथवा ज्ञान इनमें से

एक, एक से अधिक या सभी उपायों का सहारा लेकर अपना ब्रह्मभाव व्यक्त करो और मुक्त हो जाओ। बस यही धर्म का सर्वस्व है। मत, अनुष्ठान पद्धति, शास्त्र, मंदिर अथवा अन्य ब्रह्म क्रियाकलाप तो उसके गौण ब्योरे मात्र हैं।''[1]

–स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द का यह कथन सभी मनुष्यों में निहित देवत्व और इसे अपने जीवन कार्य तथा अन्तरमानवीय संबंधों में व्यक्त करने की तकनीक को परिभाषित करता है। अतः जब हम अपने बच्चों से अध्यात्म के विषय पर बातचीत करें तो हमें इस प्रकार से बातचीत करनी होगी जो उनपर प्रभाव डाले। यह इस प्रकार होना चाहिए जिसे वे समझ सकें और इससे प्रभावित हो सकें, और जैसे–जैसे वे आयु तथा ज्ञान में वृद्धि करें, वे धीरे–धीरे उसे सत्य होते पाएँ। अब हम उन्हें और अधिक कथाओं, मिथकों, किवदन्तियों तथा यह करो का आहार नहीं दे सकते। कहानियों के रूप में उनका मूल्य है, वे मनोरंजक व कभी–कभी कुछ शिक्षाप्रद भी हैं लेकिन बच्चों को कुछ आधारभूत भी दिया जाना चाहिये जिससे वे आन्तरिक रूप से बलवान् तथा संपतिवान बनें और आघात प्रदान करनेवाली परिस्थितियों के समक्ष खड़े रह सकें। उन्हें मनुष्य के बारे में कुछ वैज्ञानिक सत्य दिये जाने चाहिए। इस प्रकार उनके अन्दर दिव्यत्व प्रकट होगा और उनका मन शुद्ध होगा न कि मैला।

जब कोई शिशु जन्म लेता है, तो हम उसके वैयक्तिक भाव को पुष्ट करके उसे शिक्षित करते हैं। जन्म से पूर्व उसकी कोई वैयक्तिक पहचान नहीं थी, बल्कि वह अपने माता के शरीर का अंग था; जन्म लेने पर ही उसे अपनी शारीरिक पहचान और वैयक्तिकता मिलती है और जब दो या ढाई वर्ष की अवस्था में उसमें अहं का तथ्य विकसित होता है, वह अपनी मानसिक वैयक्तिकता का विकास एक अहं अथवा स्व में करता हैः और इसके बाद की शिक्षा इसी अहं को बलिष्ठ करना होता है जो कि इसके स्वयं की चेतना का केन्द्रबिन्दु है, यह आभास कि वह वस्तुओं में कोई वस्तु नहीं है, अपितु वह एक विषय है, एक स्व, एक आत्मा है।

एक बालक एक व्यक्तित्व में कब विकसित होता है? तब, जबकि वह अपनी पहले से पायी हुई व्यक्तिगत स्वाधीनता में कुछ सामाजिक उत्तरदायित्व के भाव को जोड़ पाता है, जब वह अन्य बच्चों और व्यक्तियों से सद्व्यवहार करता है, जब वह दूसरों को प्रेम देता और उनसे प्रेम प्राप्त करता है। यही उसकी वैयक्तिकता का आध्यात्मिक विकास द्वारा व्यक्तित्व में परिणित होना है।

विकास एक ऐसा शब्द और विचार है जो कि बढ़ते हुए बच्चों और युवाओं को आकर्षित करता है। एक बच्चा कैसे विकसित होता है? उस विकास का स्वरूप क्या होता है? उस विकास के आयाम क्या हैं? सभी बच्चे अपने कद से लम्बे बढ़ना चाहते हैं जिससे कि वे ऊँची पहुँच पा सकें और किसी ऊँची वस्तु से झुल सकें। एक नवजात शिशु जो मुश्किल से 3 किलो वजन का तथा अत्यंत कोमल है, तनिक सा ताप या शीत उसे हानि पहुँचा सकता है, लेकिन उस शिशु की आँखों में देखिये। हमें उन आंखों के पीछे जबरदस्त गहराई मिलेगी। एक गुड़िया में वह गहराई नहीं मिलेगी, केवल ऊपरी बनावट ही दिखाई देगी; लेकिन एक जीवित शिशु की आँखों में वह हमें मिलेगी। क्या कोई ऐसा विज्ञान है जो उस मानव शिशु की गहराई का आयाम जान सके, तथा ऐसा कोई तकनीक है कि जिसके द्वारा इस गहराई के पीछे की ऊर्जाओं को व्यक्त कर सके?

आज शिक्षा का सम्पूर्ण विषय जो कि मानव संसाधन का विज्ञान है, इसी दृष्टिकोण के साथ लिया जाना चाहिए। भारत ने युगों पूर्व यही किया था। उपनिषदों में महान् ऋषियों ने इसे खोजा और उनके बाद के भगवान बुद्ध जैसे अनेक आध्यात्मिक शोधकर्त्ताओं ने इसकी पुष्टि की। वे सभी धर्म जगत के महान् वैज्ञानिक थे। उन्होंने अपनी खोज द्वारा घोषणा की कि मनुष्य की इन्द्रियों द्वारा व्यक्त सीमित व मरणशील आयाम के पीछे एक असीम और अमर आयाम है और यह भी कि प्रकृति ने इस गहन सत्य को जानने के लिए मनुष्य को जैविक क्षमता प्रदान की है। यही मनुष्य का गहन विज्ञान है, आत्मा के रूप में मनुष्य का विज्ञान–अध्यात्म–विद्या अथवा ब्रह्म–विद्या। प्राचीन भारत ने इसे ही विकसित किया और मानव संभावनाओं के विज्ञान के रूप में अपने दर्शन और वेदान्त की आध्यात्मिकता के अंदर इसे पुष्ट करना जारी रखा। उपनिषदों ने इसे सभी विज्ञानों का गहनतम विज्ञान घोषित किया जो कि प्रत्येक अन्य विज्ञान का आधार है।

अतः जब मानव विकास का यह विषय हम सर जूलियन हक्स्ले द्वारा प्रचलित अभिव्यक्ति 'मानव सम्भावनाओं के विज्ञान' के संदर्भ में प्रस्तुत करते हैं, तो हम इसे युवा मनुष्यों के लिए रूचिकर बना सकते हैं। 1959 में शिकागो विश्वविद्यालय में एक वैज्ञानिक सम्मेलन हुआ जो कि डारविन की क्रम–विकास पर लिखी गयी पुस्तक के शताब्दी समारोह को आयोजित करने के लिए हुआ था। उसमें वैज्ञानिकों ने 'डारविन के बाद विकास, विकास के सौ वर्ष' विषय पर विचार–विमर्श किया। हक्स्ले ने इस विषय पर अनूठे ढंग से विचार रखे कि बीसवीं सदी के प्राणी शास्त्र के अनुसार मानव स्तर पर क्रम विकास का क्या लक्ष्य है। उनके कथन से मानव विकास के विषय पर महान् प्राचीन वेदान्त की शिक्षा की और अधिक पुष्टि होती है। जूलियन हक्स्ले ने ''क्रम–विकास दृष्टि'' विषय पर बोलते हुए कहाः

> ''इसलिए मनुष्य का अत्यधिक महत्व है.... वह ब्रह्माण्डीय पदार्थ की मात्रात्मक विशालता तथा उसके अनुपात में ऊर्जा की मात्रा के बीच यहाँ–वहाँ उस अस्तित्व की याद दिलाता है जिसकी वृत्ति मन की ओर हैं, और साथ ही साथ अस्तित्व के गुण और सम्पन्नता की ओर–और इसके अतिरिक्त, वह सम्पूर्ण क्रम–विकास प्रक्रिया में मन तथा गुणवत्ता की महत्ता का प्रमाण है।''[2]

उन्होंने मानव स्तर पर क्रम–विकास के अनूठेपन की व्याख्या की जो कि जैविक स्तर से उच्चतर स्तर की ओर बढ़ रहा है। उन्होंने इस उच्चतर स्तर को मनो–सामाजिक (Psycho-Social), क्रम–विकास की संज्ञा दी जिसमें विकास का माप–दण्ड गुणात्मकता और परितृप्ति बनते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे मात्रात्मकता, ऐन्द्रिय सन्तुष्टि तथा संख्यात्मक वृद्धि मानव–पूर्व के स्तर माप–दण्ड थे।

क्रम–विकास प्रत्येक मनुष्य से पूछता हैः आपके जीवन की गुणवत्ता क्या है? क्या आप परितृप्त हैं? इसलिये, गुणात्मक सम्पन्नता तथा परितृप्ति मानव विकास के प्रमुख लक्ष्य हैं, जबकि केवल ऐन्द्रिय संतुष्टि, संख्यात्मक वृद्धि तथा जैविक उत्तरजीविता द्वितीय स्तर के हो जाते हैं।

यदि परितृप्ति लक्ष्य है और गुणात्कता माप–दण्ड है, तो हक्स्ले कहते हैं कि हमें मानव क्रम–विकास के मार्ग–निर्देश के लिए एक नये विज्ञान की आवश्यकता है जो हमें ऐन्द्रिय स्तर के परे मनो–सामाजिक स्तर तक विकसित कर सके। उन्होंने इसे मानव सम्भावनाओं का विज्ञान कहा। अब प्रश्न यह है कि उस छोटे बच्चे में क्या–क्या सम्भावनाएँ छिपी हुई हैं? किस प्रकार के बच्चे को मनो–शारीरिक क्रम–विकास के सुदीर्घ मार्ग पर डाला जाए?

यही वह अद्‌भुत विज्ञान है जिसे वेदान्त दर्शन में भारत के ऋषियों ने विकसित किया। भारत के सभी महान उपदेशों के पीछे पूर्वकाल में श्रीकृष्ण द्वारा भगवद्‌गीता में और भगवान बुद्ध, श्रीरामकृष्ण और विवेकानंद के द्वारा वही मानव सम्भावनाओं के विज्ञान का महान् संदेश उजागर हुआ है।

हक्स्ले ने कहा था कि जैविक क्रम–विकास ने मनुष्य की बहुआयामी मस्तिष्क प्रणाली के विकास में अपनी उच्चतम उपलब्धि कर ली है, जिसकी सहायता से वह भौतिक प्रकृति की तुलना में किसी भी अंग को बेहतर और शीघ्रतर अविष्कृत कर सकता है; इसलिए मानव क्रम–विकास जैविक स्तर से उच्चतर स्तर पर अर्थात्, मनो–सामाजिक स्तर तक चला गया है। वेदान्त इसी को मानव वृद्धि का नीतिगत और आध्यात्मिक स्तर कहता है।

इस अन्वेश्ण से, वेदान्त ने मानव विकास के इस अद्‌भुत विषय पर तीन आयाम उद्‌घाटित किए हैं; शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक। हमें प्रत्येक बच्चे को ये दो बातें कहनी हैं; एक, तुम्हें वृद्धि प्राप्त करनी है, तुम्हें पूर्ण वृद्धि प्राप्त करनी है, और अपनी छिपी हुई सम्भावनाओं को पूर्णतम रूप में व्यक्त करना है। दूसरे, तुम अपनी वृद्धि के लिए स्वयं उत्तरदायी हो। हम केवल तुम्हारी सहायता कर सकते हैं, तुम्हारा उत्साहवर्धन कर सकते हैं, लेकिन वास्तविक विकास तुम्हारा ही उत्तरदायित्व है।

छह वर्ष की अवस्था से आगे उनकी वृद्धि के लिए व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का यह भाव उत्तरोत्तर बढ़ती मात्रा में उन्हीं पर रखना है। आपको उन्हें कहना होगा। आपके सामने अत्यधिक विकास की सम्भावनाएं प्रतीक्षा कर रही हैं; तुम्हारे ही अंदर मोहम्मद अली जैसा महान् मुक्केबाज अथवा, आध्यात्मिक सम्पदासम्पन्न भगवान बुद्ध जैसा

व्यक्ति, ईसा मसीह जैसा दिव्य व्यक्तित्व, या गांधी जैसा उच्च राजनेता सुप्त अवस्था में सो रहा है; याद रखें उसके अंदर ये सब महान् सम्भावनाएँ सो रही हैं – शारीरिक, बौद्धिक, कलात्मक, नीतिगत और आध्यात्मिक। अपना जीवन इस प्रकार से जियो कि तुम इन सम्भावनाओं को एक–एक करके खोल सको।

निश्चित रूप से प्रथम अभिव्यक्ति शारीरिक है। एक नवजात शिशु आहार लेता है और वस्तुओं को खींचता और धक्का लगाता है, और इस प्रकार अपनी शारीरिक शक्ति में धीरे–धीरे वृद्धि करता है। हमें आवश्यकता है कि हमारे बच्चे शारीरिक रूप से योग्य और उन्नत बनें। इसीलिए, प्राचीन भारत ने शारीरिक विकास के लिए योग की प्रणाली विकसित की थी। एक स्वस्थ शरीर अन्य सभी सम्भावनाओं के विकास का सभी अवस्थाओं के लिए आधार है। वृद्धि का दूसरा स्तर मानसिक है। एक बच्चा मानसिक विकास भी करता है। जन्म के समय वह कितना असहाय होता है। लेकिन, शीघ्र ही वह अपनी मानसिक सम्भावनाएँ विकसित कर लेता है। वह अपने आसपास के जगत् की जानकारी लेता है, उस जगत् की वस्तुओं पर नियंत्रण करके उन्हें अपने काम में लेना चाहता है। आप एक बच्चे के ज्ञान का विकास देख सकते हैं, और ज्ञान में होने वाली प्रत्येक वृद्धि उसे अधिकाधिक आत्म–निर्भरता और आत्म–विश्वास प्रदान करती है, तथा बाह्य जगत् पर अधिकाधिक पकड़ प्रदान करती है। फिर वह स्कूल जाता है, जाता है, अनेक विषयों का अध्ययन करता है, तथा ज्ञान की ऊर्जा प्राप्त करता है।

बच्चों के विकास के ये दोनों आयाम आधुनिक सभ्यता को विदित हैं। दोनों क्षेत्रों में आधुनिक मानव ने अत्यधिक प्रगति की है। आजकल आहार तथा शारीरिक विकास महान् विज्ञान हैं। जहाँ तक विकास के दूसरे आयाम की बात है, अर्थात् मानसिक या बौद्धिक विकास की, हमारे पास विविध प्रकार के शैक्षणिक अवसर हैं तथा प्रमाणित ज्ञान का विशाल भण्डार भी है। वस्तुतः, आज हम विस्मयकारी ज्ञान तथा सूचना प्रौद्योगिकी के सन्दर्भ में जी रहे हैं जैसे कि कम्प्यूटर जैसे तकनीकी यंत्र जो ज्ञान तथा सूचना का विशाल भण्डार है और आवश्यकता पड़ने पर उस संचित ज्ञान का प्रयोग भी किया जा सकता है।

लेकिन वेदान्त के अनुसार बच्चों का गहनतम विकास, बाद के आयाम में, है, यानि आध्यात्मिक विकास के आयाम में। उस आध्यात्मिक विकास का स्वरूप क्या है? युगों से मानवता के लिए 'धर्म' शब्द उस तीसरे आयाम के सन्देश को व्यक्त करता आया है।

लेकिन साम्प्रदायिक मत–मतान्तरों के जाल में 'धर्म' शब्द में कुछ अवैज्ञानिकता, रहस्यपूर्ण रूढ़िवादिता तथा अन्धविशवास की गन्ध आती है। इस महान् विषय के प्रति एक वैज्ञानिक तथा अनुभवी दृष्टिकोण की आवश्यकता है; केवल तभी हम इसका सही अर्थ क्या है और पूर्णतम मानव विकास में इसका मूल्य क्या है यह ज्ञान सकेंगे। तभी वेदान्त के अनुसार बच्चों की आध्यात्मिक परतें खुलेंगी। हर बच्चे में एक दिव्य सम्भावना छिपी हुई है।

यदि एक बालक में से भगवान बुद्ध व्यक्त हो सकते हैं तो हम यह क्यों नहीं मानते कि प्रत्येक बालक में बुद्ध प्रकृति है? हमारे सभी प्राच्य दर्शन इस सत्य पर बल देते हैं। ईसा मसीह ने कहा थाः ''ईश्वर का राज्य तुम्हारे अन्दर है।'' यह एक सुन्दर विचार है। अतः विश्व के सभी महान धर्मों का उच्चतम आयाम तथा बीसवीं सदी का जीव विज्ञान हमें एक स्वर में बताते हैं कि नीतिगत, सौन्दर्यमय, तथा आध्यात्मिक मूल्यों की परतें बालक के जीन संबंधी (Genetic) वंशानुगत और बौद्धिक आयामों के परे, जब वह बड़ा होता है, खुलती हैं, और यह भी कि प्रत्येक बालक को उसके आध्यात्मिक, मनो–सामाजिक तथा पूर्णतम शारीरिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास के मार्ग पर रखा जाना चाहिये।

निष्कर्ष

अतः हम यह कह सकते है कि आज विश्व के हमारे सुन्दर बच्चों को आध्यात्मिक विकास के उस सुदीर्घ व सुन्दर मार्ग पर रखा जाना चाहिये जिससे कि वे शारीरिक व बौद्धिक वृद्धि के साथ–साथ अधिक से अधिक सुन्दरता, सच्चाई और अच्छेपन को अभिव्यक्त कर सकें। इसके लिए, जैसा बीसवीं सदी का प्राणी शास्त्र माँग करता है, और

विश्व के महान् धर्मो ने जिस पर सदा बल दिया है, हमें मात्रात्मकता पर कम और गुणात्मकता पर अधिक से अधिक बल देना होगा।

संदर्भ सूची

1. *विवेकानन्द साहित्य,* खंड–1, पृष्ठ संख्या–34।
2. ''डारविन के बाद विकास : विकास के सौ वर्ष'', तृतीय खंड, जुलियन हक्सले, ''*क्रम विकास के मुद्दे* '', पृष्ठ संख्या–252।

****